खरतरगच्छ के साहित्यसर्जक श्रावकगण

[लेखक—अगरचन्द नाहटा]

जैनधर्म महान् तीर्थङ्करों की एक साधना परम्परा है। साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका चतुर्विध संघ-तीर्थ की स्थापना तीर्थङ्कर करते हैं। साधना के दो मुख्य मार्ग उन्होंने बतलाये हैं, अणगार धर्म और सागार धर्म। साधु-साध्वी अणगार धर्म का व श्रावक-श्राविका आगार धर्म का पालन करते हैं अर्थात् साधु-साध्वी पचमहाव्रतधारी होते हैं और श्रावक-श्राविका सम्यक्त्व तथा बारह व्रतों के धारक होते हैं। साधु-साध्वी की आवश्यकताएं सीमित होने से उनका अधिकांश समय स्वाध्याय ध्यान और तप संयम में व्यतीत होता है अतः उन्हें अपनी ज्ञान-वृद्धि, साधु-साध्वियों को वाचना प्रदान, श्रावक-श्राविकादि भव्यों को धर्मोपदेश देनेके साथ-साथ ग्रन्थ-निर्माण और लेखन के लिए काफी समय मिल जाता इसलिए अधिकांश जैनसाहित्य जैनाचार्यों व मुनियों द्वारा रचित प्राप्त है। पर श्रावक समाज अपनी आजीविका व गृह-व्यापार में अधिक व्यस्त रहता है इसलिए उनके रचित साहित्य अल्प परिमाण में प्राप्त होता है। खरतरगच्छ में भी आचार्यों व मुनियों का जितना विशाल साहित्य उपलब्ध है, उसके अनुपात में श्रावकों का रचित साहित्य बहुत ही कम है। फिर भी समय-समय पर जिन विद्वान एव कवि श्रावकों ने प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश राजस्थानी-गुजराती-हिन्दी आदि में जो रचना की है उनका यथाज्ञात विवरण यहां प्रकाशित किया जा रहा है।

ग्यारहवीं शताब्दी के आचार्य वर्द्धमानसूरि और उनके विद्वान शिष्य जिनेश्वरसूरि से खरतरगच्छ की विशिष्ट परम्परा प्रारम्भ होती है। सं० १४२२ में खरतरगच्छ के रुद्रपल्लीय शाखा के सोमतिलकसूरि रचित सम्यक्त्व सप्ततिका वृत्ति के अनुसार ग्यारहवीं शताब्दी के सुप्रसिद्ध तिलकमंजरी नामक अप्रतिम कथा ग्रन्थ के प्रणेता महाकवि धनपाल के पिता जिनेश्वरसूरि के मित्र थे और धनपाल के भ्राता शोभन (चतुर्विंशति के प्रणेता) जिनेश्वरसूरि के शिष्य थे। इस प्रवाद के अनुसार खरतरगच्छ के प्रथम श्रावक कवि धनपाल माने जा सकते हैं। महाकवि धनपाल की तिलकमंजरी के अतिरिक्त ऋषभपंचाशिका, रूचउरीय महावीर उत्साह, जिनपूजा व श्रावक-विधि प्रकरण आदि रचनाएं प्राप्त है। प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश तीनों भाषाओं में प्राप्त ये रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं।

श्रीजिनदत्तसूरिजी के उल्लेखानुसार श्रीजिनवल्लभसूरिजी कालीदास के सदृश विशिष्ट कवि थे। उनकेभक्त नागोर निवासी धनदेव श्रावक के पुत्र पद्मानंद सस्कृत भाषा के अच्छे कवि थे। उनके रचित वैराग्य शतक प्रकाशित हो चुका है।

श्रीजिनदत्तसूरिजी के श्रावक पल्हकवि रचित जिनदत्तसूरि स्तुति की ताड़पत्रीय प्रति जेसलमेर भंडार में प्राप्त है। यह स्तुति हमारे 'ऐतिहासिक जैनकाव्य-संग्रह' में प्रकाशित है। जिनदत्तसूरिजी के अन्य श्रावक कपूरमल ने ब्रह्मचर्य परिकरणम् (गा० ४५) मणिधारी जिनचन्द्रसूरिजी के समय में बनाया था जिसे हम 'मणिधारी जिनचन्द्रसूरि' की प्रथमावृत्ति में प्रकाशित कर चुके हैं। मणिधारीजी के श्रावक 'लखण' कृत 'जिनचन्द्रसूरि अष्टक' उपर्युक्त ग्रन्थ की द्वितीयावृत्ति में प्रकाशित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वादि-विजेता जिनपतिसूरिजी ने मरोट के नेमिचन्द भंडारी को सं० १२५३ में प्रतिबोध दिया। भंडारीजी के पुत्र ने जिनपतिसूरिजी से दीक्षाग्रहण की वे उनके पुत्र जिनेश्वरसूरि बने। श्रीनेमिचन्द्र भंडारी अच्छे विद्वान थे, उनका प्राकृत भाषा में रचित "षष्टिशतक प्रकरण" श्वेताम्बर समाज में ही नहीं, दिगम्बर समाज तक में मान्य हुआ। उसकी कई टीकाएं और बालावबोध विद्वान मुनियों द्वारा रचित उपलब्ध और प्रकाशित हैं। भंडारीजी की दूसरी रचना जिनवल्लभसूरि गुणवर्णन (गा० ३५) है और हमारे ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह में प्रकाशित हो चुकी है। इनके अतिरिक्त एक ६ गाथा का पार्श्वनाथ स्तोत्र जेसलमेर भंडार में मिला है।

जिनपतिसूरिजी के दो भक्त श्रावक साह रयण और कविभत्तउ ने २० गाथाओं के "जिनपतिसूरि धवल गीत बनाये जो हमारे ऐतिहासिक जैनकाव्य संग्रह में प्रकाशित हैं।

जिनेश्वरसूरि के समय श्रावककवि झगड़ूने "सम्यक्त्व माई चौपाई" सं० १३३१ में बनाई जो बड़ौदा से प्रकाशित "प्राचीन गूर्जर काव्य संचय में छप चुकी है।

श्रीजिनकुशलसूरिजी के गुरु श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के श्रावक लखमसीह रचित जिनचन्द्रसूरि वर्णनारास (गा० ४७) जेसलमेर भंडार से प्राप्त हुआ है, प्रतिलिपि हमारे संग्रह में है।

उपर्युक्त श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के समय में ठक्कुर फेरू नामक बहुत बड़े ग्रन्थकार खरतरगच्छ में हुए। उनकी प्रथम रचना "युगप्रधान चतुष्पदिका" सं० १३४७ में रची गई उक्त रचना को हमने संस्कृत छाया व हिन्दी अनुवाद सहित 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित की थी। ठक्कुर फेरू कन्नाणा निवासी थे यह चतुष्पदिका अपभ्रंश के २६ पद्यों में राजशेखर वाचक के सानिध्य में माघ महीने में रची गई। ये फेरू, श्रीमाल धांधिया चन्द्र के सुपुत्र थे, आगे चलकर दिल्ली सम्राट अलाउद्दीनखिलची के कोश और टंकशाल के अधिकारी बने और अपने विविधविषयक अनुभव के आधार से रत्नपरीक्षा सं० १३७२ में पुत्र हेमपाल के लिए गा० १३२ में रचा, जिसको हिन्दी अनुवाद और अन्य महत्वपूर्ण रचनाओं के साथ हमने अपने "रत्नपरीक्षा" ग्रन्थ में प्रकाशित किया है। वास्तुशास्त्र संबन्धी वस्तुसार नामक रचना भी प्राकृत की २०५ गाथाओं में है जो कन्नाणापुर में सं० १३७२ विजयादशमी को रची गई और हिन्दी अनुवाद सह पंडित भगवानदासजी ने इसे प्रकाशित कर दी है। ज्योतिष विषयक गा० २४३ का ज्योतिषसार ग्रन्थ भी सं० १३७२ में रचा। गणित विषयक गणितसार नामक महत्वपूर्ण ग्रन्थ ३११ गाथा का रचा। आपकी अन्य महत्वपूर्ण रचना धातोत्पत्ति गा० ५७ की है इसे भी हमने अनुवाद सहित यू० पी० हिस्टोरीकल जर्नल में प्रकाशित करवा दिया है।

भारतीय साहित्य का अद्वितीय ग्रन्थ-द्रव्यपरीक्षा मुद्राशास्त्र सम्बन्धी है जो १४६ गाथाओं में सं० १३७५ में रचा गया। इसमें भारतीय प्राचीन सिक्कों का बहुत ही महत्वपूर्ण वैज्ञानिक विवरण दिया है जिससे अनेक महत्वपूर्ण नवीनतथ्य प्रकाश में आते हैं। उन सिक्कों का माप तौल भी सही रूप में दिया गया है क्योंकि वे स्वयं अलाउद्दीन बादशाह की टंकशाल में अधिकारी रहे थे। अतः उसमें अलाउद्दीन के समय तक की मुद्राओं का विशद विवरण दिया गया है। ठक्कुर फेरू के ग्रन्थों की एकमात्र प्रति हमने कलकत्ते के नित्य मणि जीवन जैन लाइब्रेरी के ज्ञानभंडार में खोज के निकाली थी। इन महत्वपूर्ण ग्रन्थों के सम्बन्ध में सर्वप्रथम हमने विश्ववाणी में लेख प्रकाशित किया था। स्वर्गीय मुनि कान्तिसागरजी के भी विशाल-भारत में लेख प्रकाशित हुए थे। प्राप्त सभी ग्रन्थों का संकलन करके हमने पुरातत्वाचार्य मुनिजिनविजयजी द्वारा राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से "रत्नपरीक्षादि-सप्त-ग्रन्थ संग्रह"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाम से प्रकाशित करवा दिया है। स्व० मुनि कान्ति-सागरजी ने इनके एक अन्य ग्रन्थ भूगर्भप्रकाश (श्लोक ५१) का उल्लेख किया है पर हमें अभी तक कहीं से प्राप्त नहीं हो सका है।

चौदहवीं शताब्दी के श्रावक कवि समधर रचित नेमि-नाथ फागु गा० १४ का प्रकाशित हो चुका है। पन्द्रहवीं शताब्दी के जिनोदयसूरि के श्रावक विद्धणु की ज्ञानपंचमी चौपई सं० १४२१ भा० शु० ११ गुरु को रची गई। कवि विद्धणु ठक्कुर माहेल के पुत्र थे, इसकी प्रति पाटण के संघ भंडार में उपलब्ध है।

खरतरगच्छ के महान् संस्कृत विद्वान श्रावक कवि मण्डन मांडवगढ में रहते थे और आचार्य श्रीजिनभद्रसूरिजी के परम-भक्त थे। इन्होंने ठक्कुर फेरू की भांति इतने अधिक विषयों पर संस्कृत ग्रन्थ बनाये हैं जितने और किसी श्रावक के प्राप्त नहीं है। मंत्री मंडन श्रीमाल वाहड़ के पुत्र थे इनके जीवनी के संबन्ध में इनके आश्रित महेश्वर कवि ने "काव्य मनोहर" नामक काव्य रचा है। मुनि जिनविजयजी ने विज्ञप्ति-त्रिवेणी में मंत्री मंडन संबन्धी अच्छा प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं—"ये श्रीमाल जाति के सोनिगिरा वंश के थे। इनका वंश बड़ा गौरवपूर्ण व प्रतिष्ठावान् था। मंत्री मंडन और धनदराज के पितामह का नाम 'झंझण' था। मंडण बाहड़ का छोटा पुत्र था व धनदराज देहड़ का एक मात्र पुत्र था इन दोनों चचेरे भाइयों पर लक्ष्मीदेवी की जैसी प्रसन्न दृष्टि थी वैसे सरस्वती देवी की पूर्ण कृपा थी अर्थात् ये दोनों भाई श्रीमान् होकर विद्वान भी वैसे ही उच्चकोटि के थे।"

"मंडन ने व्याकरण, काव्य, साहित्य, अलंकार और संगीत आदि भिन्न-भिन्न विषयों पर मंडन शब्दाङ्कित अनेक ग्रंथ लिखे हैं। इनमें से ९ ग्रंथ तो पाटण के बाड़ी पार्श्वनाथ भंडार में सं० १५०४ लिखित उपलब्ध हैं: जो ये हैं—१ काव्यमंडन (कौरव पांडव विषयक) २ चम्पूमंडन (द्रौपदी विषयक) ३ कादम्बरी मंडन (कादम्बरी का सार) ४ शृंगार मंडन ५ अलंकार मंडन ६ संगीत मंडन ७ उपसर्ग मंडन ८ सारस्वत मंडन (सारस्वत व्याकरण पर विस्तृत विवेचन) ९ चंद्रविजय प्रबन्ध।" इनमें से कई ग्रंथ तो मंडन ग्रंथावली के नाम से दो भागों में "हेमचंद्र सूरि ग्रंथमाला" पाटण से प्रकाशित हो चुके हैं।

"मंडन की तरह धनराज या धनद भी बड़ा अच्छा विद्वान था। इसने 'धनद त्रिशती' नामक ग्रंथ भर्तृहरि की तरह शतकत्रयी का अनुकरण करने वाला लिखा है। यह काव्यत्रय निर्णयसागर प्रेस काव्यमाला १३ वें गुच्छक में छप चुका है। इन ग्रंथों में इनका पाण्डित्य और कवित्व अच्छी तरह प्रगट हो रहा है।

मंडन का वंश और कुटुम्ब खरतरगच्छ का अनुयायी था। इन भ्राताओं ने जो उच्च कोटि का शिक्षण प्राप्त किया था वह इसी गच्छ के साधुओं की कृपा का फल था। इस समय इस गच्छ के नेता जिनभद्रसूरि थे इस लिये उनपर इनका अनुराग व सद्भाव स्वभावतः ही अधिक था। इन दोनों भाइयों ने अपने अपने ग्रंथों में इन आचार्य की भूरि भूरि प्रशंसा की है। इनने जिनभद्रसूरि के उपदेश से एक विशाल सिद्धान्त कोष लिखाया था। वह ज्ञानभंडार मांडवगढ का विध्वंश होने से बिखर गया पर उसकी कई प्रतियां अन्यत्र कई ज्ञानभंडारों में प्राप्त है।

प्रगट-प्रभावी श्रीजिनकुशलसूरिजी के दिव्याष्टक, जिसकी रचना जिनपद्मसूरिजी ने की थी, पर धरणीधर की अवचूरि प्राप्त है पर कवि का विशेष परिचय और समय की निश्चित जानकारी नहीं मिल सकी। सोलहवीं शताब्दी के श्रावक कवि लक्ष्मीसेन वीरदास के पौत्र एवं हमीर के पुत्र थे। उन्होंने केवल सोलह वर्ष की आयु में जिन वल्लभसूरि के संघपट्टक जैसे कठिन काव्य की वृत्ति सं० १५११ के आबूण में बनाई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनदत्तसूरि ज्ञान भंडार सातवें ग्रन्थांक के रूप में उ० हर्षराज की लघु वृत्ति एवं साधुकीर्ति की अवचूरि सह प्रकाशित हो चुकी है।

सतरहवीं शताब्दी में हिन्दी जैन कवियों में कविवर बनारसीदास सर्व श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। वे श्रीमाल जाति के खड्गसेन विहोलिया के पुत्र और जौनपुर के निवासी थे। खरतरगच्छ की श्रीजिनप्रभसूरि शाखा के विद्वान भानुचन्द्रगणि से आपने विद्याध्ययन और धार्मिक अभ्यास किया था। बनारसीदासजी के लिये भानुचन्द्रजी ने मृगांकलेखा चौपाई सं० १६६३ में जौनपुर में बनाई। बनारसीदासजी ने अपनी नाममाला आदि रचनाओं में अपने विद्यागुरु भानुचन्द्र का सादर स्मरण किया है। आगे चलकर ये व्यापार के हेतु आगरा आये और समयसार, गोमट्टसार आदि दिगम्बर ग्रन्थों के अध्ययन से इनका झुकाव दिगम्बर सम्प्रदाय की ओर हो गया। उनके साथी कुंवरपाल चोरड़िया भी 'सिंदुरप्रकर के' पद्यानुवाद में सहयोगी रहे हैं और भी कई व्यक्ति आपकी अध्यात्मिक चर्चा से प्रभावित हुए और बनारसीदासजी का मत अध्यात्ममती या बनारसीमत नाम से प्रसिद्ध हुआ। मुलतान आदि दूरवर्त्ती खरतरगच्छ के ओसवाल भी अध्यात्ममत से प्रभावित हुए और वहाँ जो भी श्वेताम्बर कवि एवं विद्वान गए उन्हें भी अध्यात्मिक रचना करने के लिये प्रेरित किया। बनारसीदासजी का वह अध्यात्म-मत अब दिगम्बरों में तेरहपंथ नाम से प्रसिद्ध है और लाखों व्यक्ति दिगम्बर सम्प्रदाय में उस तेरहपंथी सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। मूलतः कविवर बनारसीदासजी खरतरगच्छ के ही विशिष्ट कवि थे। उपाध्याय मेघविजय ने भी अपने युक्ति-प्रबोध नाटक में इनके खरतर गच्छानुयायी होने का उल्लेख किया है। बनारसीदासजी की प्रारम्भिक रचनायें श्वेताम्बर सम्प्रदाय से सम्बन्धित हैं।

बनारसीदासजी का अर्द्धकथानक नामक हिन्दी की पहला पद्यबद्ध आत्मचरित हिन्दी साहित्य में अपने ढंगका अद्वितीय ग्रन्थ है। समयसार, बनारसी-विलास, नाममाला आदि आपकी रचनाएं पर्याप्त प्रसिद्ध हैं और प्रकाशित हैं।

सतरहवीं शताब्दी के अंत में लखपत नामक खरतर-गच्छ के एक श्रावक कवि हुए हैं जो सिन्धु देश के सामुही नगर के कूकड़ चोपड़ा तेजसी के पुत्र थे। इनकी प्रथम रचना तिलोयसुंदरी मंगलकलश चौ० सं० १६९१ के आ० सु० ७ थट्टानगर में बुहरा अमरसी के कथन से रचित है। १२ पत्रों की प्रति का केवल अंतिम पत्र ही तपागच्छ भंडार जेसलमेर में हमारे अवलोकन में आया था। कवि की दूसरी रचना मृगांकलेखा रास सं १६९४ श्रा० सु० १५ बुधवार को जिनराजसूरि-जिनसागरसूरि के समय में रची गई। २५ पत्रों के अन्तिम २ पत्र ही तपागच्छ भंडार जेसलमेर में हमारे देखने में आये।

१८वीं शताब्दी में कवि उदयचन्द मथेन बीकानेर में हुए, जो महाराजा अनूपसिंह से आदर प्राप्त थे। अनूपसिंह के नाम से इन्होंने हिन्दी में अनूप शृंगार नामक ग्रन्थ सं० १७२८ में बनाया, जिसकी एक मात्र प्रति अनुप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर में है। इसको रचना सं० १७६५ में हुई। उदयचन्द मथेन का तीसरा ग्रन्थ पांडित्य-दर्पण प्राप्त है।

मलूकचन्द रचित पारसी वैद्यकग्रन्थ तिब्बसहावी का हिन्दी पद्यानुवाद 'वैद्यहुलास'नाम से प्राप्त हे। कवि ने अपना विशेष परिचय या रचनाकालादि नहीं दिए पर इसकी कई हस्तलिखित प्रतियां खरतरगच्छ के ज्ञानभंडारों में देखने में आई अतः इसके खरतर गच्छीय होने की संभावना है।

१९वीं शताब्दी में अजीमगंज-मकसूदाबाद के श्रावक सबलसिंघ अच्छे कवि हुए जिन्होंने सं० १८६१ में चौबीस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन स्तवनों और विहरमान बीसी की रचना की। इन्होंने अपनी रचना में श्रीजिनहर्षसूरि के प्रसाद से रचे जाने का उल्लेख किया है।

२०वीं शताब्दी में नाथनगर में श्री अमरचन्द जी बोथरा खरतरगच्छ के कट्टर अनुयायी और सुकवि थे। इनके रचित दो चौवीसियां प्रकाशित हो चुकी है। ये पहले तेरापंथी थे श्रीजिनयशःसूरिजी महाराज के अजीमगंज पधारने पर अनेक वादविवाद के पश्चात् ये खरतरगच्छानुयायी मन्दिर-मार्गी बने। खरतरगच्छ की आचरणाओं आदि के विषय में आपका गहरा अध्ययन व चिन्तन था। श्रीमद् देवचन्द्रजी की रचनाएं आपको अत्यन्त प्रिय थी।

उपर्युक्त खरतर गच्छ के श्रावक कवियों के अतिरिक्त कतिपय छोटे मोटे और भी अनेक कवि हुए हैं जिनके जिनभद्रसूरि गीत आदि रचनाएं हमारे अवलोकन में आई है। खोज करने पर और कई खरतरगच्छीय कवियों की रचनाएं प्राप्त होगी। बीसवीं शताब्दी में तो हिन्दी गद्य-पद्य लेखक, कई कवि हो गए हैं जिनमें से राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद बहुत ही प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। खरतर गच्छीय यति रायचन्द जी ने इनके खानदान के राजा डालचन्द के लिये सं० १८३८ में कल्पसूत्र का पद्यानुवाद किया था। उन्होंने विचित्र मालिका और अवयदी शकुनावली की रचना की। राजाशिवप्रसाद 'सितारे हिन्द' के बहुत से ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं उनकी दादी रत्नकुंवरि बीबी लखनऊ के राजा वच्छराज नाहटा की पुत्री थी। उसने सं० १८४४ में माघ बदि ५ को प्रेमरत्ननामक हिन्दी काव्य बनाया। कवियित्री रत्नकुंवरि बड़ी पंडिता थी और उसका झुकाव कृष्ण-भक्ति की ओर दिखाई देता है। राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की लड़की गोमती बीबी जैनधर्म की अच्छी जानकार थी। यहखानदान खरतरगच्छीय हैं।

स्वयं ग्रन्थ रचना करने के अतिरिक्त खरतरगच्छ के बहुत से श्रावकों ने विद्वान यतिमुनियों से अनुरोध कर अनेकों रचनाएं करवायी थी। उनसब का विवरण देखने से खरतर गच्छीय श्रावकों के साहित्य प्रेम का अच्छा परिचय मिल जाता है।

ज्ञानभंडारों की स्थापना और अभिवृद्धि में तो श्रावक समाज का महत्वपूर्ण योग रहा है। हजारों प्रतियां उन्होंने प्रचुर द्रव्य व्यय कर लिखवायी। कविजनों को समय समय पर पुरष्कार आदि देकर प्रोत्साहित किया। कई श्रावक अच्छे विद्वान थे, पर साहित्य निर्माण का उन्हें सुयोग प्राप्त नहीं हुआ। विद्वानों का सत्संग, स्वाध्याय प्रेम उन्हें बहुत रुचिकर रहा है। समय समय पर विद्वान मुनियों सेउन्होने गम्भीर विषयों पर प्रश्न उपस्थित कर उनसे समाधान किया जिसका उल्लेख कई प्रश्नोत्तर ग्रन्थों में पाया जाता है।

खरतर गच्छ की कई संस्थाओं ने विद्वान बनाने की योजना बनाई थी पर खेद है कि वह योजना सफल नहीं हो पायी। आज भी इस बात की बड़ी आवश्यकता प्रतीत होती है कि उचित व्यवस्था करके उच्चस्तरीय अध्ययन कर जिज्ञासु विद्यार्थियों को विद्वान बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया जाय। खरतरगच्छ के साहित्य के संपादन प्रकाशन, नवीन साहित्य निर्माण में विद्वान श्रावकों की अत्यन्त आवश्यकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org